पृ. 144--160

परिशिष्ट

परिशिष्ट - १

देवेश ठाकुर : संक्षिप्त परिचय

२३ जुलाई १९३३ : नानी के गाँ पैठानी जिल्हा अल्मोडा में जन्म ।

मई १९३७ : श्रीनगर गढवाल में अक्षार ज्ञान ।

जुलाई १९३९ : पैठाने के बटुलिया प्राइमरी स्कूल में पहली कक्षा में प्रवेश ।

अगस्त १९४० : धौंदपुर, बिनौर में तीसरी कक्षा में प्रवेश ।

अप्रैल १९४२ : धौंदपुर, बिजनौर से प्राइमरी चौथी कक्षा दूसरे क्रमांक में उत्तीर्ण ।

जुलाई १९४२ : पिताजी का नजीबाबाद स्थानान्तर । ५ वी कक्षा में सीट न मिलने से गवर्नमेंट हाईस्कूल में फिर से चौथी कक्षा में प्रवेश ।

१९४९ : गवर्नमेंटहाईस्कूल नजीबाबाद से हाईस्कूल की परीक्षा उत्तीर्ण ।

१९५१ : हिन्दू इन्टर कॉलेज, नगीना, बिजनौर से इन्टर आर्टस् की परीक्षा उत्तीर्ण ।

१९५१ : नगीना के एक बुकसेलर के इस आश्वासन पर कि आगे की पढाई जारी रखाने के लिए शेष्ठा समय में दुकान पर काम करना होगा, जुलाई में मुरादाबाद प्रस्थान । बाद में बुकसेलर का मुकरना और नजीबाबाद वापसी ।

अगस्त १९५१ : मित्रों से कुछ राशि उधार लेकर देहरादून के डी. ए. वी. कॉलेज में बी. ए. में प्रवेश ।

मई १९५३ : दिल्ली में बाटा शू कम्पनी की एक दुकान में दो महिने शू-ब्वाय की नौकरी ।
कार्य - जूते के डिब्बों की झाड-पोंछ ।

१९५३ : बी. ए. की परीक्षा उत्तीर्ण और एम्. ए. हिन्दी की कक्षा में प्रवेश ।

१९५३ : पहली कविता स्थानीय पत्रिका "बैंगाई" में प्रकाशित।

१९५४ : पहला काव्य-संग्रह "मयूरिका" प्रकाशित ।

१९५५ : एम्. ए. की परीक्षा उत्तीर्ण ।

१९५१ - ५५ : आर्थिक संकट के सबसे कठिन दिन । अपना खर्च जुटाने के लिए ईटों के भट्टों, कॉलेज के साइकिल स्टैंड और होटल में नौकरी । १०-१०, १५-१५

रुपये की ट्यूशनें। कोचिंग क्लास में शिक्षण उधार, उपवास, अपमान और उपेक्षा से भरी जिन्दगी।

जुलाई १९५५ : हरगनपुर [बुंदकी के निकट] गाँव के एक स्कूल में ६ दिन की अध्यापकी। बाद में गाँव के चौधरी साहब द्वारा अपने किसी सम्बन्धी की नियुक्ति करने के लिए अपनी छुट्टी ....।

२३ जुलाई १९५५ : उसी दिन नजीबाबाद लौटते हुए बुंदकी स्टेशन पर गाडी की प्रतीक्षा करते हुए अपनी निरर्थकता का अहसास और आत्महत्या का निश्चय। बाद में निर्णय स्थगित।

अगस्त १९५५ : नजीबाबाद के प्राइवेट "पब्लिक हाईस्कूल" में ४०/- रुपये रुपये माहवार की मास्टरी। तरुण-साहित्य मण्डल की स्थापना।

अक्टूबर १९५५ : डिफेन्स सर्विसेस के टेस्ट ऑडिट विभाग में क्लर्की और बम्बई आगमन। साहू श्रेयांस प्रसाद जैन के बंगले "शिकार कुंज" में पहला पडाव। पहली रात उनके जानकी कुटीर, जुहू स्थित बंगले में। नृत्य, संगीत, वैभव और विलास से पहला साक्षात्कार।

दिसम्बर १९५५ : सान्ताक्रुज स्थित "कालूराम वर्मा की चाल" में अपने मामा के घर प्रस्थान। बीच के दिनों में कुछ समय एक होटल में आवास।

मई-जून १९५९ : डिफेंस सर्विसेज से इस्तीफा। देहरादून प्रस्थान और बी. एड. में प्रवेश।

जुलाई १९५६ : सिडनहेन कॉलेज, बम्बई में असिस्टेंट प्राध्यापक के रूप में नियुक्ति। वापस बम्बई आगमन।

अक्टूबर १९५६ : धर्मेन्द्र सिंह कॉलेज, राजकोट में तबादला।

जून १९६० : धर्मेन्द्र सिंह कॉलेज से त्याग-पत्र।

जून १९६० : रामनारायण रुइया कॉलेज, बम्बई में हिन्दी प्राध्यापक के रूप में नियुक्ति।

जुलाई १९६१ : सागर विश्वविद्यालय से पीएच. डी.।

१२ अक्टूबर१९६१ : मेरठ में सुशीला इंग से विवाह।

३१ दिसम्बर ६२ : पहली बेटी आभा का मेरठ मे जन्म।

११ दिसम्बर ६३ : दूसरी बेटी आरती का बम्बई में जन्म।

२ मई १९६५ : पिताजी का बम्बई में निधन।

१९७१ : सागर विश्वविद्यालय से डी. लिट्. की उपाधि ।

१९७५ : पहला उपन्यास "भ्रमभंग" भारतीय ज्ञानपीठ से प्रकाशित ।

१९७५-७६ : उत्तर प्रदेश हिन्दी साहित्य संस्थान द्वारा "आधुनिक हिन्दी साहित्य की मानवतावादी भूमिकाएँ" ग्रन्थ विशिष्ट "तुलसी पुरस्कार" से सम्मानित ।

१९७८ : रामनारायण रुया कॉलेज में हिन्दी विभागाध्यक्ष ।

१९८६ : "समीचीन" [त्रैमासिक/वार्षिक] पत्रिका का प्रकाशन - सम्पादन अबतक १६ अंक प्रकाशित ।

१९९२ : अबतक ४२ पुस्तकें तथा १५०० से अधिक रचनाएँ और समीक्षाएँ प्रकाशित ।

१९९२ : "देवेश ठाकुर रचनावली" [सात खण्ड] प्रकाशित ।

३० जुलाई १९९३ तक : अध्यक्ष, हिन्दी विभाग, रामनारायण रुया कॉलेज, बम्बई तथा स्नातकोत्तर अध्यापक और शोध निदेशक, बम्बई विश्वविद्यालय ।

सम्प्रति : १ अगस्त, १९९३ से सेवानिवृत्त । बम्बई के एक नये हिन्दी साप्ताहिक कार्यालय में कार्यरत ।

निवास : बी - २३, हिमालय पर्वतीय को-ऑपरेटिव हाऊसिंग सोसायटी, असल्फा, घाटकोपर [पश्चिम], बम्बई - ४०० ०८४

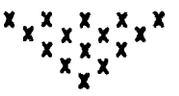
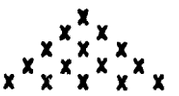
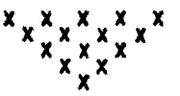

परिशिष्ट - २

[अ] देवेश ठाकुर के अब तक प्रकाशित ग्रन्थ :-

काव्य : [१] मयूरिका [२] अन्तरछाया [३] अवकाश के क्षणों में [४] कविताएँ [उपर्युक्त तीनों काव्य-संग्रहों का संकलन]

कहानी : [५] सिर्फ संवाद

उपन्यास : [६] भ्रमभंग [७] प्रिय शबनम [८] कौंचघर [९] अपना-अपना आकाश [१०] इसीलिये [११] जनगाथा [१२] गुरुकुल [१३] शून्य से शिखर तक [१४] अन्ततः

शोध : [१५] प्रसाद के नारी पात्र [१६] आधुनिक हिन्दी साहित्य की मानवतावादी भूमिकाएँ।

समीक्षा : [१७] नयी कविता के सात अध्याय [१८] "नदी के द्विप" की रचना-प्रक्रिया [१९] मैला आँचल की रचना-प्रक्रिया [२०] हिन्दी कहानी का विकास [२१] साहित्य के मूल्य [२२] साहित्य की सामाजिक भूमिका [२३] आलेख।

बालसाहित्य : [२४] ममता [उपन्यास [२५] दो सहेलियाँ [कहानियाँ]।

कॉलेजोपयोगी / [२६] हिन्दी निबन्ध प्रदीप [२७] कॉलेज निबन्ध और रचना [२८] व्यवहार वीथिका [पत्राचार]।

सम्पादन : [२९] कथा-क्रम १ [३०] कथा-क्रम २ [३१] कथा वर्ष १८७६ [३२] कथा वर्ष १९७७ [३२] कथा वर्ष १९७८ [३३] कथा वर्ष १९७९ [३४] कथा वर्ष १९८० [३५] कथा वर्ष १९८१ [३६] कथा वर्ष १९८२ [३७] कथा वर्ष १९८३ [३९] समीचीन कथा वर्ष १९९३ [४०] रचना-प्रक्रिया और रचनाकार [४१] हिन्दी की पहली कहानी [४२] प्रेमचन्द साहित्य के अध्येता : डॉ. कमल किशोर गोयनका तथा देवेश ठाकुर रचनावली [सात खण्ड]

[ब] देवेश ठाकुर के व्यक्तित्व - कृतित्व पर प्रकाशित ग्रन्थ :-

१. देवेश ठाकुर : व्यक्ति, समीक्षक और कथाकार - डॉ. नन्दलाल यादव
२. कथा - शिल्पी देवेश ठाकुर - प्रो. सतीश पाण्डेय
३. देवेश ठाकुर : प्रश्नों के घेरे में - डॉ. भानुदेव शुक्ल
४. गुरुकुल : मूल्यांकन और पुनर्मूल्यांकन - डॉ. शशेशचन्द्र चुलकीमठ
५. पांडुलिपि - डॉ. ब्रम्हदेव मिश्र

x x x x x x x x

परिशिष्ट - ३

[अ] देवेश ठाकुर के नाम भेजी गयी प्रश्नावली

प्रा. सौ. माधवी सं. बागी
एम्. ए.,
शोधछात्रा [एम्. फिल्.]
३५, रानडे कॉलनी,
हिंदवाडी,
बेळगांव - ५९० ०११
फोन नं. २५७०८

प्रति

वंदनीय डॉ. प्रा. देवेश ठाकुरजी
सविनय अभिवादन।

महोदय,

शिवाजी विश्वविद्यालय, कोल्हापूर के हिंदी विभाग के प्रमुख डॉ. वसंतराव मोरेजी के निर्देशन में मैं एम्. फिल्. उपाधि के लिए लघुशोध प्रबंध लिख रही हूँ।

विषय है : "देवेश ठाकुर के "भ्रमभंग" उपन्यास का अनुशीलन"।

अप्रैल ९४ के अंततक मुझे शोध प्रबंध एम्. फिल्. उपाधि के लिए विश्वविद्यालय को प्रस्तुत करना है।

"भ्रमभंग" उपन्यास के शीर्षक ने मुझे इस विषय की ओर आकर्षित किया। मूल उपन्यास मैंने गौर से पढा। उपन्यास की कथावस्तु तथा पात्र मध्यवर्गीय जीवन का प्रतिबिंब है। उपन्यास ने मेरी चेतना को उद्बोधित किया। रचनावली भाग १ से ७ देखे। डॉ. नंदलाल यादव द्वारा संपादित "देवेश ठाकुर : व्यक्ति समीक्षक और कथाकार" रचना भी पढी। कराड के प्रा. डॉ. पी. एस्. पाटील का शोध प्रबंध "देवेश ठाकुर और उनका उपन्यास साहित्य" [अप्रकाशित] भी मैंने देखा। "भ्रमभंग" उपन्यास के प्रमुख पात्र चंदन के चरित्र - चित्रण को लेकर मैंने कई पहलुओं को लेकर डॉ. पाटील के साथ विचार विमर्श किया है। फिर भी कुछ प्रश्नों के संदर्भ में आपसे मार्गदर्शन चाहती हूँ। मेरे शोधनिर्देशक डॉ. वसंतराव मोरेजी की अनुमति से मैं आपको निम्नलिखित प्रश्नावली भेज रही हूँ। उम्मीद है आप मुझे निराश नहीं करेंगे।

यह भी सुना है कि आप ११ दिसम्बर ९३ को कोल्हापूर में शिवाजी विश्वविद्यालयीन हिंदी प्राध्यापक परिषादके अधिवेशन समय मार्गदर्शन के लिए पधार रहे हैं। कोल्हापूर में मैं आपसे मिलना चाहती हूँ और भ्रमभंग उपन्यास के उद्देश के संदर्भ में आपका मार्गदर्शन चाहती हूँ। आप अगर मुलाकात के लिए समय तथा तिथि मुझे सूचित करने की कृपा करेंगे तो मैं आपकी एहसानमंद रहूँगी।

प्रश्नावली

१] भ्रमभंग शीर्षक रोचक आकर्षक कलात्मक तो है लेकिन सार्थक कहाँतक है१जो आदर्श अपेक्षित थे वे सफल नहीं हुये। आदर्शों को भ्रम कहना कहाँतक उचित होगा१

२] अगर भ्रमभंग आपकी निजी "आपबीती" है तो आपने आत्मकथात्मक शैली में प्रस्तुत उपन्यास क्यों नहीं लिखा.१ किसी काल्पनिक पात्रा "चन्दन नेगी" के सृजन की क्यों आवश्यकता पडी?

३] क्या आप येह संदेश देना चाहते हैं कि परिवार में उक्त परिस्थितियों में चंदन का आदर्श रखो१ परिवार के सदस्य माँ, बहन तथा भाई के साथ संबंध विच्छेद करने में क्या चंदन के चरित्र की सफलता मानी जा सकती है१ अगर नहीं तो उपन्यास का संदेश क्या है१

दिनांक : २९-१०-१९९३

[सौ. माधवी बागी]

प्रति,

माननीय प्रा. डॉ. वसंत केशव मोरे,
हिंदी विभाग प्रमुख,
शिवाजी विद्यापीठ,
कोल्हापूर

DEVESH THAKUR

B-23, HIMALAYA PARVATIYA
CO-OP. HOUSING SOCIETY,
ASALPHA, GHATKOPAR (WEST)
BOMBAY-400 084

प्रिय (श्रीमती) माधवी जी,

आपका 29/10 का पत्र मिला। जानकर प्रसन्नता हुई कि आप 'भ्रमभंग' पर अपना लघु-शोध प्रबन्ध कर रही हैं। शुभकामनाएँ स्वीकारें।

आपके प्रश्नों का उत्तर देने का प्रयास कर रहा हूँ।

1. 'भ्रम भंग' में किसी आदर्श को निरूपित करने की भावना नहीं है। एक परिवार के बड़े पुत्र द्वारा अपने पारिवारिक दायित्व का निर्वाह करने और उसे ऊंचा और सफल बनाने का भाव ही उसमें है। चंदन का यही एक सपना था कि उसका परिवार ऊपर उठे। परिवार के प्रति अपनी जिम्मेदारियों को पूरा करके चंदन अपना नैतिक दायित्व पूरा करना चाहता था। इसके लिए आवश्यक था कि परिवार के लोग भी उसकी इस कर्तव्य भावना को समझें। लेकिन, जैसा कि निम्न मध्य-वर्ग में आमतौर पर होता है, कि कमाऊ बेटे से निरन्तर अपेक्षा बढ़ती जाती है और उसकी समस्याओं, उसके हितार्थ को अनदेखा कर दिया जाता है, ठीक वैसा ही चंदन के परिवार में भी हुआ है। परिवार के लोगों की नितांत स्वार्थपरता एक बिंदु पर आकर कृतघ्नता में बदल जाती है। तब चंदन को लगता है कि परिवार को अपने साथ लेकर चलने, उसे ऊंचा उठाने का जो सपना उसने देखा था, वह भ्रम मात्र था, जो धीरे-धीरे भंग होता रहा है। इसीलिए वह स्वयं आगे बढ़ इस दायित्व को एक निर्णय लेकर उतार फेंकता है। चंदन न राम है, न गौतम, न गांधी और न बुद्ध या ईसा। वह इस व्यवस्था में पला-बढ़ा हुआ एक सामान्य मध्य-वर्गीय व्यक्ति है। उसके कुछ मूल्य हैं जिनके तहत वह अपने को अपने परिवार के प्रति जिम्मेदार मानता है। लेकिन उसको परिवार के लोगों से जो व्यवहार मिलता है, उससे उसकी विवशता और घुटन बढ़ती जाती है और वह एक कठोर निर्णय लेने पर विवश हो जाता है। जिंदगी को घिसटते रहने में वह विश्वास नहीं करता। वह अपना दिमाग हल्का रखना चाहता है। इसीलिए वह ऐसा निर्णय लेता है जिसे लाख चाह कर इस समाज के हजारों-लाखों युवक चंदन की स्थिति में होने के बावजूद नहीं ले पाते और जीवन को घसीटते रहते हैं।

(2)

मुझे लगता है कि इस प्रश्न को उठाने के पीछे कथा-नायक चंदन को आदर्श-पात्र मानने की भावना ही प्रमुख रही है। चंदन की रचना करते समय मेरा यह आशय था ही नहीं। वैसे भी मैं वस्तु स्थितियों को यथार्थ और व्यावहारिकता के परिप्रेक्ष्य में देखने का हामी हूं।

2. 'ग्रास-संग' में मेरी आपबीती का अधिकांश है अवश्य, लेकिन उसे आत्म-कथा की शैली में इसलिए नहीं लिखा गया कि ऐसा करने से रचना में व्यक्तिपरकता की गंध आने लगती है और उसका दायरा सीमित हो जाता है। मैंने इस व्यक्तिपरकता से बचना चाहा है। और इसीलिए चंदन को रचना पड़ा है। वैसे आप देखेंगी कि आज के माहौल में निम्न मध्य वर्ग में चंदनों को ~~इस~~ बहुत करके इसी प्रकार के शोषण और अन्याय का शिकार होना पड़ता है। आज की व्यवस्था का और समाज दोनों इतने आत्मकेंद्रित और स्वार्थ केंद्रित हो गये हैं कि कुछ मूल्य लेकर चलने वाले चंदनों को मार झेलने के लिए अभिशप्त होना ही पड़ता है। तब अपने अस्तित्व को बचाने के लिए उन्हें ऐसा निर्णय लेने की आवश्यकता पड़ती है जो सामान्य रूप से स्वाभाविक नहीं होते। क्योंकि चंदन ने एक कठोर लगता अमानवीय निर्णय लेकर अपने अस्तित्व की रक्षा ही की है। लेकिन उसका मानना है कि स्वार्थी, आत्मकेंद्रित और घटिया ~~लोगों~~ बन गए लोगों के लिए अपना जीवन होम करना बुद्धिमानी नहीं है। 'ग्रास-संग' को आत्म-कथा के रूप में न लिखे जाने का मूल कारण यही था कि इसकी 'वस्तु' को विस्तार और व्यापकता मिले।

3. चंदन जिस प्रकार की पारिवारिक परिस्थितियों में उलझा जाता है, भौतिक रूप से, उसमें चंदन का निर्णय मैं गलत नहीं मानता। मैंने अपने परिवार में स्वयं यह निर्णय लिया है। जहां तक परिवार के साथ संबंध-विच्छेद में चंदन की सफलता-असफलता का प्रश्न है, उसके संदर्भ में आप स्वयं निर्णय ले सकती हैं वस्तुपरक होकर, भावुक हो कर नहीं। अगर वह यह निर्णय न लेता तो न वह स्वयं जी पाता, न अपने परिवार (पत्नी-बच्चों) के लिए कुछ कर पाता और न ही उसे में अपने पिता के परिवार के लिए कुछ करने का उत्साह शेष बचा रहता।

जहां तक उपन्यास के संदेश की बात है, वह यही है कि एक बिंदु पर आकर व्यक्ति को निर्णय लेना ही पड़ता है। वस्तुपरकता के साथ। मां उस समय तक मां है जब तक उसमें मातृत्व है। मातृत्व विहीन, स्वार्थी, आत्मकेंद्रित नारी को मैं मां का सम्मान नहीं दे सकता। वैसे मेरे लिए वह प्रत्येक व्यक्ति उस समय तक आदरणीय है, जब तक मेरे संदर्भ में

DEVESH THAKUR

B-23, HIMALAYA PARVATIYA
CO-OP. HOUSING SOCIETY,
ASALPHA, GHATKOPAR (WEST)
BOMBAY-400 084

(3)

वह अपने व्यवहार से अपने को घटिया साबित नहीं कर देता। मैं X के संबंधों पर विश्वास करता हूँ। आप दुनिया के लिए बुरे हों, यदि मेरे लिए ठीक हैं तो आप के प्रति मेरे मन में कोई कटुता या दुर्भाव नहीं पनपेगा। मेरी जीवन-शैली यही है। जो कल तक मेरे लिए माँ, बहिन, आदि थे, वे समय बदलने पर मेरे लिए स्वार्थी और घटिया बन जाते हैं तो उनके लिए पहले जैसी निष्ठा और संवेदना दिखाने में मूर्खता मानता हूँ। मैं निश्चित ही नैतिकता, कर्तव्य पालन, संवेदना और व्यवहार को बड़ी चीज मानता हूँ। मैं उससे प्रतिबद्ध भी हूँ लेकिन सिर्फ उनके लिए जो इन भावनाओं का गलत फायदा नहीं उठाते। ऐसी स्थिति में विवेक के साथ निर्णय लेने में ही व्यक्ति की जीत है। जो व्यक्ति आत्मग्लानि में जीता है, वह वास्तव में जीता नहीं, जीवन को ढोता है। यह स्थिति न चंदन को मंजूर है, न मुझे।

आशा है, इनसे आपका काम चल जाएगा।

हिंदी अकादमी की मीटिंग में यदि डॉ. मोरे जी मुझसे मिले थे। कह रहे थे कि 11 सितम्बर को मुझे कोल्हापुर आना है। लेकिन अभी मुझे कोई सूचना नहीं मिली है। मिलेगी तो अवश्य आऊँगा। आपसे मिल कर प्रसन्नता ही होगी।

आप स्वस्थ-प्रसन्न होंगे।

आपका

देवेशठाकुर

=-

परिशिष्ट ४

डॉ. देवेश ठाकुर से एक साक्षात्कार

=-

दिनांक : २२ दिसम्बर १९९३	प्रा. सौ. माधवी बागी
स्थान : शिवाजी विश्वविद्यालय,	एम्. ए.,
कोल्हापुर	एम्. फिल्. [शोधछात्रा]

शिवाजी विश्वविद्यालय, कोल्हापुर की एम्. फिल्. [हिंदी] उपाधि के लिए मैं "देवेश ठाकुर" के "भ्रमभंग" उपन्यास का अनुशीलन" विषय पर लघु-शोध प्रबंध तैयार कर रही हूँ। पिछले दिनों अपने शोध निर्देशक, शिवाजी विश्वविद्यालय के हिंदी विभागाध्यक्ष डॉ. वसंत केशव मोरेजी से मुझे संकेत मिला था कि डॉ. देवेश ठाकुर बुधवार दिनांक २२ दिसम्बर १९९३ को शिवाजी विश्वविद्यालयीन हिंदी प्राध्यापक परिषद के अधिवेशन में प्रमुख अतिथि के रूप में कोल्हापूर आ रहे हैं। मैंने डॉ. देवेश ठाकुर से पत्राचार करके कोल्हापूर में साक्षात्कार के लिए समय देने का निवेदन किया था। आपने तुरंत उत्तर देकर मुझे कोल्हापूर में साक्षात्कार के लिए समय दे दिया।

बुधवार दिनांक २२ दिसम्बर १९९३ को अपनी बडी बहन सौ. सुषमा रोटे [जो इसी विश्वविद्यालय में डॉ. वसंत केशव मोरे के निर्देशन में पीएच्.डी कर रही है] तथा अपने पिताश्री प्राचार्य एन्.बी.गुंडे के साथ मैं शिवाजी विश्वविद्यालय के अतिथिगृह [कमरा क्र. ८] में नियत समय [साढे पांच बजे] पर पहुँच गयी।

डॉ. देवेशजी से मिलने से पूर्व मैं उनकी आकृति, पहनावे और मुद्राओं की कल्पना उनके विषय में पढी-सुनी गयी बातों के आधारपर करती रही थी - कुर्ता, पायजमा, सफेद दाढी, मुँह में पाइप, आँखों पर चश्मा, झुके हुए कंधे आदि। और अब रिटायर भी हो गए हैं अर्थात् थोडे बहुत बूढे जैसे भी दीखाते होंगें। ऐसा सोचते सोचते जब मैं कमरा क्र. ८ में गई तो उन्हें देखकर मैं अवाक् रह गयी। कॉड्राय की पैंट जो कि आजकल का फैशन है, उसीपर मैचिंग प्रिन्टेड शर्ट, अच्छी देहयष्टि और बिल्कुल युवा चुस्ती। कुछ देर के लिए तो मैं सोच में पड गयी कि कहीं ये दूसरे व्यक्ति तो नहीं हैं लेकिन जब पिताजीने मेरा उनसे परिचय कराया तब कहीं मन को आश्वस्ति

हुई कि यही मेरे चहेते लेखक देवेशजी हैं | सोचने लगी, चलो अपने देवेशजी तो बिल्कुल मॉडर्न हैं |

बाद में इसी मॉडर्नवाली बात को जब मैंने बातों-बातों में उनसे पूछा तो उन्होंने हँसते-हँसते जवाब दिया कि, "मैं अपने बुढापे को ढँकने के लिए ही आजकल ऐसे कपडे पहनने लगा हूँ |"

डॉ. देवेशजी की अपनत्वभरी मुस्कान मुझे आज भी याद है | उनके साथ उनकी पत्नी भी कोल्हापूर आयी थीं | देवेशजीने हमसे उनका परिचय कराया | फिर आत्मीय परिचय के बाद धीरे-धीरे साक्षात्कार के लिए वातावरण बनने लगा |

बातचीत शुरु करने से पहले मन में कुछ हलचल सी हो रही थी | मन में कहीं संकोच था और घाबडाहट भी कि इतने बडे लेखक के साथ मैं किस प्रकार वार्तालाप कर पाऊँगी? इस से मुझमें कँपन सा होने लगा | शायद मेरी इस घाबडाहट को देवेशजीने पहचान लिया | उन्होंने बडे सहज भाव से कहा - "बेटे, तुम्हारे मन में जो भी जिज्ञासा है उसके बारे में हम आराम से बातचीत करेंगे | तुम बिल्कुल टेंशन मत लो |" उनके इस स्नेह भरे शब्दों से मुझे बडी आश्वस्ति मिली और मैंने क्रमवार अपनी जिज्ञासाएँ प्रश्नोंके रूप में प्रस्तुत कर दीं |

संक्षेप में उनके साथ हुए साक्षात्कार का ब्यौरा इस प्रकार है :

"भ्रमभंग" को आपकी आपबीती माना गया है | कहा जाता है कि व्यक्ति अपने संबंध में लिखाते समय तटस्थ नहीं रह पाता | अपनी कमजोरियों को कहने में उसकी कलम लडखडा जाती है | क्या इसी कारण आपने "भ्रमभंग" के नायक चंदन नेगी की कमजोरियों पर पर्दा डाला है?

-- " ऐसा है, सभी इन्सानों में थोडी बहुत मात्रा में कमजोरियाँ तो होती ही हैं | उसी प्रकार चंदन नेगी में भी कुछ कमजोरियाँ हो सकती हैं, और हैं | लेकिन "भ्रमभंग" में जिस कथ्य और संदर्भों को लिया गया है उस के संदर्भ में चंदन नेगी के चरित्र में अधिक मात्रा में कमजोरियाँ नहीं आती | इसीकारण "भ्रमभंग" में चंदन नेगी के कमजोरियों का कम उल्लेख हुआ है |"

पढा है कि आपको हमेशा राजनीति में अच्छे अंक मिलते थे फिर भी आपने हिन्दी में ही एम.ए. क्यों किया?

-- "देखो, उस वक्त जिन हालातों से संघर्ष करके मैं जी रहा था, उसमें पढाई के लिए अधिक समय देना मेरे लिए संभव नहीं था | एक ओर अर्थाभाव थो, दूसरी ओर राजनीति विषाय की पढाई का माध्यम अंग्रेजी था, तीसरे अपनी रोटी और फीस के लिए पैसे जुटाने यानी ट्यूशन करने में ही मेरा अधिकांश समय बीत जाता था | तो मुझे लगता था कि, मैं राजनीति विषाय लेकर एम्. ए. नहीं कर पाऊँगा | मेरा तो लक्ष्य था, किसी भी हालत में एम्. ए. करना | हिंदी मेरे लिए आसान थी और विश्वास था कि हिंदी को लेकर अच्छे नंबरों से परीक्षा पास करने में मुझे कठिनाई नहीं होगी | बस, इसीलिए एम्. ए. में मैंने हिंदी ली |

डॉ. देवेशजी के उक्त उत्तर से उनकी स्पष्टवादिता और प्रामाणिकता का एक अच्छा प्रमाण मिलता है | मैंने आगे पूछा :

आमतौर पर लोग अपने को एक राष्ट्रप्रेमी और अच्छा इन्सान साबित करने के लिए झूठ-मूठ ही कह डालते हैं, कि ..... हिन्दी राष्ट्रभाषा हैं और राष्ट्रप्रेम से प्रेरित होकर उन्होंने हिन्दी विषाय चुना |

लेकिन बीच में ही देवेशजी कहते हैं :

-- "नहीं, जब ऐसी कोई बात मेरे मन में नहीं थी | न राष्ट्रप्रेम की, न राष्ट्रभाषा की | बस मेरे लिए हिंदी आसान थी |"

जैसा कि मैंने पहले ही कहा है कि "भ्रमभंग" की कथा आपकी आपबीती-सी लगती है | उसमें आपके जीवन के हरएक पहलूपर प्रकाश पडा है | जब "भ्रमभंग" को आपके घरवालोंने पढा, तब उनपर आपके प्रति क्या प्रतिक्रिया हुई?

-- ""भ्रमभंग" का प्रकाशन मेदी शादी के बाद हुआ | इसलिए उपन्यास में आई सभी - बातें को मेरी पत्नी ने भी देखा और सहा है | अपनी बेटियों से हमने इस विषाय में ज्यादा बात नहीं की | और न उनको इसमें कोई रुचि लेने दी | वे दोनों हम दोनों को अच्छी तरह समझाती हैं | और हमारे लिए इतना काफी है | परिवार के दूसरे सदस्यों की याने माँ, बहन या भाई पर क्या प्रतिक्रिया हुई, यह मैं नहीं जानता क्योंकि पिछले २५ वर्षों से उनसे मेरी मुलाकात तक नहीं हुई है | हालाँकि वे सभी आज भी बम्बई में ही रहते हैं | इसलिए उनकी प्रतिक्रियाओं के बारे में मुझे कुछ भी पता नहीं|"

कहते हैं, एक हाथ से ताली कभी नहीं बजती | मतलब कि किसी ऐसी घाटनाओं के लिए दोनों पक्ष जिम्मेदार होते हैं | उसीप्रकार घंदन नेगी पर जो कुछ भी बीती है, क्या उसमें उसका थोडा भी दोष नहीं था?

-- [थोडा आवेश में आकर] "मैं कब कहता हूँ, कि उसमें उसका दोष नहीं था | उसका सबसे बडा दोष तो यह था कि उसने अपनी माँ, बहन और भाई को हद से ज्यादा प्यार किया, उनकी हद से ज्यादा चिंता की | उसकी भूल यही थी कि अपनी बिकट आर्थिक परिस्थितियों में भी वह उन सबकी बढती माँगें पूरी करता रहा | लेकिन वे उसके इस प्यार को नहीं समझ पाये | दिन-ब-दिन वे अपनी मतलबी माँगों को उसपर ढोते गए | तो एक दिन यही होना था | वह हो गया |"

फिर उन्होंने एक दो किस्से भी सुनाए | "मारक-तंगी" के दिनों में जब एक बार घंदन की प्रेयसी ने उसे कोई भेंट देनी चाही तो उसने कहा कि यदि भेंट देनी है तो मेरी बहिन के लिए एक स्कर्ट का कपडा दे दो |

बम्बई में घंदन के पिता की मौत हुए दो दिन हुए थे तभी उसकी बहन चम्पा देहरादून से परीक्षा देकर बम्बई आती है | घंदन उसे लेने स्टेशन जाता है | सामने बाल मुँडवाये हुये भाई को देखकर वह चुप रहती है और घर आनेपर वह पहला प्रश्न पूछती है कि, इस घर में मेरा अपना कौनसा कमरा है?

देवेशजी मुझसे पूछते हैं कि यदि आप घंदन नेगी के स्थान पर होती तो उसवक्त आपको कैसे लगता? मैं कुछ देर के लिए गहरे सोच में खो गयी | वातावरण में बिल्कुल सन्नाटा छा गया | माहौल भारी हो चला था | मैंने विषाय बदल कर प्रश्न किया :

क्या आप भाग्य पर विश्वास रखाते हैं? क्या आप ऐसा मानते हैं, कि यह सब घंदन नेगी के भाग्य का खेल है?

-- देवेशजी सीधे जवाब देते हैं, "मैं किस्मत या भाग्य को बिल्कुल नहीं मानता | इसी भाग्य, पुनर्जन्म और भागवान इन तीन शब्दों के कारण हमारे समाज - देश की आज यह हालत हो गयी है | इसलिए घंदन नेगी पर जो कुछ भी बीती वह उसके भाग्य का खेल है, इस बात से मैं बिल्कुल असहमत हूँ |

उनके इस स्पष्ट विचार से मैं उनसे बहुत प्रभावित हो गयी | मुझे उसमें जीवन का एक नया दृष्टिकोण प्राप्त हुआ |

मेरी प्रश्नावली के एक प्रश्न का उत्तर देते समय आपने लिखा था कि, मैं "वन इन टू वन" के संबंधोंपर विश्वास रखाता हूँ | इसका मतलब क्या हैं?

-- "हाँ, मैं वन इन टू वन के संबंधों पर विश्वास रखाता हूँ | मतलब कि जो जिसप्रकार का व्यवहार मेरे साथ रखाता है, उसीप्रकार का संबंध मैं उसके साथ रखाता हूँ | भला वह दूसरों के लिए कैसा भी क्यों न हो |" अपनी बात का स्पष्टीकरण करते हुए देवेशाजीने कहा कि, "दुनिया की नजर में कोई व्यक्ति यदि बदमाश, लफंगा और गुण्डा है लेकिन अगर वह मेरे साथ अच्छे संबंध रखाता है तो मैं उसे गुण्डा या बदमाश नहीं समझाता | जैसे, डाकू दुनिया की जनर में डाकू है, लेकिन वह अपने बच्चों की नजरों में एक अच्छा पिता भी हो सकता है | जरूरी नहीं, कि वह उनके भी नजरों में भी डाकू ही हो |"

इस उदाहरण को सुनकर लगा कि देवेशाजी के विचार करने का तरीका, सोचने का ढंग एक आम आदमी से बिल्कुल अलग है | शायद इसलिए आप असाधारण व्यक्ति जान पडते हैं | अब बातचीत में धीरे-धीरे खुलापन आ रहा था | मैंने अगला प्रश्न किया :

आप अपनी कामयाबी का सच्चा हकदार किसको मानते हैं? आपकी बीवी, माँ, बहन को या खुद को?

-- "मैं अपनी कामयाबी का सच्चा हकदार अपने गुरुवर आचार्य नन्ददुलारे बाजपेयी और प्रेरणा स्त्रोत डॉ. हजारीप्रसाद द्विवेदी को मानता हूँ | उन्हीं के प्रोत्साहन से मुझे लिखाने की प्रेरणा मिली | आचार्य नन्ददुलारे बाजपेयी से क्या पढना है, कैसे पढना है और कितना पढना है आदि अध्ययन प्रक्रिया की दृष्टि मिली और डॉ. हजारीप्रसाद द्विवेदी से मुझे जीवनदृष्टि मिली | वे दोनों मेरे लिए पूज्य हैं | डॉ. ह. द्विवेदीजी की मानवतावादी दृष्टि से प्रभावित होकर ही मैंने मानवतावाद पर डी. लिट. की है | और यह भी सही है कि, इस कामयाबी में मुझे मेरी पत्नी का भी महत्वपूर्ण सहयोग मिला है | जब मैं लिखाने बैठता हूँ तो वह मेरे मित्रों को और अन्य लोगों को मुझसे मिलने नहीं देती | इतना ही नहीं वह खुद भी इसके बारे में सतर्क रहती है | मुझे लिखाते समय कभी भी डिस्टर्ब नहीं करती |"

"भ्रमभंग" उपन्यास में बहन चम्पा का चरित्र अधूरा सा लगता है | उसके स्वभाव की बुराइयोंका कम उल्लेख हुआ है | इसप्रकार का चरित्र चित्राण करने का प्रयोजन क्या था ?

-- "चंदन नेगी की बहन चम्पा में वैसी कोई बुराई थी ही नहीं | कोई भी व्यक्ति मूलत: बुरा नहीं होता | परिस्थितियाँ ही उसे बुरा बनाती हैं | अथवा कई बार व्यक्ति अपनी परिस्थितियों के कारण बुरा बनने के लिए विवश हो जाता है | ठीक उसीप्रकार चम्पा में पहले से ही बुराइयाँ नहीं थी | लेकिन जब वह देहरादून से वापस आती है तब पूरी बदलकर आती है |"

अगला सवाल पूछने से पहले मुझे लगा कि शायद मेरा यह प्रश्न पूछना उचित नहीं होगा | जबकि एक माँ सामने है | उससे पुरानी यादें ताजी हो जाएंगी | वैसे उनका दिल दुखाने का मेरा कोई उद्देश्य नहीं था| मन में विद्वानों के विचार जानने की चाह थी | बस, मैंने देवेशजी से पूछा :

पुत्र तो कुल का दीपक होता है | बुढापे का सहारा होता है | आपकी जीवनी को पढने के बाद पता लगा कि आपके पुत्र सन्तान नहीं है | क्या अब इस उम्र में आप पुत्र की कमी महसूस करते हैं?

-- मेरा सवाल पूरा होने से पहले ही देवेशजी की पत्नी थोडा खुली आवाज में कहती हैं - "नहीं ऐसा कुछ भी नहीं है | हमें पुत्र की जरूरत कभी महसूस ही नहीं हुई |" उनके इन शब्दों में थोडा आवेश और थोडी भावुकता थी | वातावरण में एक प्रकार का तनाव बन रहा था | उसे संभालते हुए देवेशजीने शांति से अपनी पत्नी को ओर देखकर कहा, "इसके बारे में मैं आपको बताता हूँ | सच्चाई यह है कि,
मैं आज अपने आपको इस मायने में खुशनसीब समझता हूँ कि, मुझे पुत्र सन्तान नहीं है | मैं सन्तान के मामले में बडा भाग्यशाली रहा हूँ | मेरी दो बेटियाँ ही मेरी जिंदगी है | वही हमारी सबकुछ हैं | हम पति-पत्नी अपनी बेटियों से बहुत खुश हैं |"

उनके ये सन्तानविषायक विचार सुनकर लगा कि, यदि हर माँ-बाप का सोचने का ढंग हमारे देवेशजी जैसा होता तो आज समाज में बेटियों, बहुओं को लेकर जो नृशंस घटनाएँ हो रही हैं, वे न हो पाती | मैंने मन ही मन प्रार्थना की, कि भगवान करे, आप जैसे माँ-बाप सभी बेटियों के नसीब में हो | मन में उन खुशनसीब बेटियों के बारे में जानने की इच्छा उत्पन्न हुई तो मैंने उनसे पूछा :

क्या बेटियों के बारे में कुछ बताना पसंद करेंगे?

-- "मेरी दोनों बेटियों की शादी हो चुकी है | छोटी बेटी को एक बेटा भी है | हमारे परिवार में केरल प्रान्त को छोडकर सारा हिन्दुस्तान समाया हुआ है | बेटियों की शादी के समय मैंने दामादों के सामने तीन शर्तें रखी थीं |

१] शादी में कन्यादान नहीं करूँगा | कन्या कोई गाय-बकरी नहीं होती जिसका दान किया जाए |

२] शादी के बाद पाँव छूना-छुवाना मुझे पाखंड लगता है |

३] शादी रजिस्टर्ड और बिल्कुल सादी होगी और उसमें दहेज जैसी कोई चीज नहीं होगी | मैं दहेज के खिलाफ हूँ | शादीपर फिजूल खर्चा करना मुझे पसंद नहीं |

इन्हीं शर्तों के साथ मेरे दामादोंने शादी के लिए "हाँ" की | मैं इस मायने में भी भाग्यवान हूँ, कि मुझे मनचाहे दामाद मिले हैं |"

-- "मेरी बडी बेटी आभा जो कि एम्. डी. [फिजीशियन] और डी. एन्. बी. है, अमेरिका जाकर पिछले दिनों ही लौटी है | वह मेरा और मेरी पत्नी का बडा खयाल रखाती है | मेरी छोटी बेटी आरती बम्बई के एक कॉलेज में प्राफेसर हैं | वह पतली सी और बिल्कुल बच्ची सी दिखाती है | शुरू-शुरू में पढाते समय क्लास के कुछ शरारती लडके उसे तंग किया करते थे | जब उसने मुझे इसके बारे में बताया जब मैंने उसे एक सलाह दी कि, कल तुम क्लास में जाते ही उन शरारती लडकों में से सबसे शरारती लडके पर ध्यान रखाना और जैसे ही वह कुछ शरारत करने की कोशिशभी करे, सीधे जाकर उसकी शर्ट पकड लेना | तुम्हें अलहेक उससे कुछ बोलने की जरुरत नहीं पडेगी| और सचमुच, दूसरे दिन उसने बिल्कुल वैसा ही किया जैसा मैंने बताया था | जबसे लडकोंने क्लास में करारत करनी छोड दी | आजब वह कॉलेज में सबसे ज्यादा लोकप्रिय अध्यापक है |"

अब बातचीत में बहुत रंग आ रहा था | दिल चाहने लगा था, ऐसे ही छोटे-मोटे बोधक किस्से देवेशजी हमें सुनाते रहें | लेकिन समय की सीमा थी | उन्हें कहीं जाना था |

रिटायर्ड होने के बाद आपकी [देवेशजी की] दिनचर्या क्या रहती है [यह] मैंने जानना चाहा |

-- "वैसे तो मेरी दिनचर्या प्रत्येक दिन की अलग अलग होती है | फिर भी बताऊँगा | सबेरे इन दिनों जरा देर से उठता हूँ | फिर दैनिक कर्म, अखबार आदि पढने में कुछ समय निकल जाता है | दोपहर को कुछ समय के लिए एक नए हिंदी साप्ताहिक के कार्यालय में जाता हूँ | रात ९ बजे तक घर लौट आता हूँ | १० बजे से रात १-२ बजे तक अपना लिखना - पढना करता हूँ | फिर विश्राम |"

बेलगाम से कोल्हापूर आते समय सोच रही थी कि पता नहीं मुझे सारे प्रश्नों के जवाब मिलेंगे या नहीं | लेकिन डेढ-दो घंटे की इस बातचीत में उम्मीद से भी जादा जानकारी पाकर मैं बहुत प्रसन्न थी | तभी धारवाड के प्रतिभासंपन्न विद्वान डॉ. चन्द्रलाल दुबेजी ने कमरे में प्रवेश किया | उनसे मेरा परिचय कराया गया | एक ही दिन दो - दो महान हस्तियों का दर्शन मेरे लिए बडे सौभाग्य की बात थी |

जब मैं देवेशजी से विदा ले रही थी, तब उन्होंने आशीष स्वरूप मुझे एक पुस्तक दी - "पांडुलिपि"| गोवा विश्वविद्यालय के हिंदी विभागाध्यक्ष डॉ. ब्रम्हदेव मिश्र ने देवेशजी के व्यक्तित्व कृतित्व पर देश के अनेक हिंदी विद्वानों के लेखों का संकलन किया है "पांडुलिपि" में | मैंने अत्यंत कृतज्ञता के साथ उनके इस आशीर्वाद को ग्रहण किया | २३ वर्ष की आयु में उपप्राचार्य के रूप में अपना कैरियर आरंभ करते हुए भी मुझे इतनी प्रसन्नता नहीं हुई थी जितनी देवेशजी से इस आशीर्वाद को लेकर हुई |

शोधछात्रा
[माधवी बागी]

सन्दर्भ ग्रन्थ सूचि पृ॰ 161--163

सन्दर्भ ग्रन्थ सूचि

अ] आधार ग्रन्थ :-

१] डॉ. ठाकुर देवेश : "भ्रमभंग" भारतीय ज्ञानपीठ प्रकाशन, दिल्ली, प्रथम संस्करण १९७५

आ] समीक्षा ग्रन्थ :-

१] डॉ. गुलाबराय : "सिध्दान्त और अध्याय", प्रतिभा प्रकाशन, दिल्ली, प्रथम संस्करण १९५१

२] जैन सुरेशकुमार : "हिन्दी और मराठी के रेखाचित्रों का तुलनात्मक अध्ययन", अन्नपूर्णा प्रकाशन, कानपुर, प्रथम संस्करण १९८५

३] जैनेन्द्रकुमार : "साहित्य का श्रेय और प्रेम", पूर्वोदय प्रकाशन, दिल्ली, प्रथम संस्करण १९५३

४] डॉ. टंडन प्रतापनारायण : "हिन्दी उपन्यास उद्भाव और विकास", कल्पकार प्रकाशन, लखनऊ, प्रथम संस्करण १९७४

५] वही : "हिन्दी उपन्यासों मे कथाशिल्प का विकास", हिन्दी साहित्य भण्डार, लखनऊ, द्वितीय संस्करण १९६४

६] वही : "हिन्दी उपन्यास कला", हिन्दी समिती सूचना विभाग, लखनऊ, प्रथम संस्करण १९६५

७] डॉ. दुबे तहसिलदार : "स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी उपन्यास साहित्य में शिल्प विधिका का विकास", नटराज पब्लिशिंग हाऊस, परियाणा, प्रथम संस्करण १९८३

८] प्रा. पाण्डेय सतीश : "कथा-शिल्पि देवेश ठाकुर", अरविंद प्रकाशन, बम्बई, प्रथम संस्करण १९८६

९] प्रेमचंद : "कुछ विचार", सरस्वती प्रेस, बनारस, चतुर्थ संस्करण १९४९

१०] डॉ. बांदिवडेकर चंद्रकांत : "आधुनिक हिन्दी उपन्यास : सृजन और आलोचना" नॅशनल पब्लिशिंग हाऊस, दिल्ली, प्रथम संस्करण १९८५

११] डॉ. बेचन : "आधुनिक हिन्दी कथा साहित्य और चरित्र विकास", सन्मार्ग प्रकाशन, दिल्ली, प्रथम संस्करण १९६५

१२] सम्पा. डॉ. मिश्र ब्रम्हदेव : "पाण्डुलिपि", संकल्प प्रकाशन, बम्बई, प्रथम संस्करण जून १९९३

१३] डॉ. मिश्र दुर्गाशंकर : "अज्ञेय का उपन्यास साहित्य", हिन्दी साहित्य भण्डार, लखनऊ, प्रथम संस्करण १९७६

१४] सम्पा. डॉ. यादव नन्दलाल : "देवेश ठाकुर : व्यक्ति, समीक्षक और कथाकार", मीनाक्षी प्रकाशन, दिल्ली, प्रथम संस्करण १९८३

१५] डॉ. रांगा रणवीर : "हिन्दी उपन्यास में चरित्र-चित्रण का विकास", भारतीय साहित्य मंदिर, दिल्ली, प्रथम संस्करण १९६१

१६] शर्मा जगन्नाथ प्रसाद : "कहानी का रचना विधान", प्रथम संस्करण १९६१

१७] सम्पा. डॉ. शिवबालन रोहिणी : "देवेश ठाकुर रचनावली - एक", संकल्प प्रकाशन, ए-३४, बिल्वकुंज को-ऑपरेटिव्ह हाऊसिंग सोसायटी, मुलुंड[पश्चिम], बम्बई, प्रथम संस्करण १९९२

१८] वही : वही - दो - वही

१९] वही : वही - तीन - वही

२०] वही : वही - चार - वही

२१] वही : वही - पाँच - वही

२२] वही : वही - छः - वही

२३] वही : वही - सात - वही

२४] डॉ. शुक्ल भानुदेव : "देवेश ठाकुर : प्रश्नों के घेरे में", संकल्प प्रकाशन, मेरठ, प्रथम संस्करण १९८६

२५] डॉ. श्यामसुंदरदास : "साहित्यालोचन", इंडियन प्रेस लि., प्रयाग, नववाँ संस्करण, संवत् २००६

२६] डॉ. सिन्हा सुरेश : "हिन्दी उपन्यास", लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, १९७२

२७] डॉ. सिंह त्रिभुवन : "हिन्दी उपन्यास शिल्प और प्रयोग",
हिन्दी प्रचारक संस्थान, वाराणसी,
प्रथम संस्करण १९७३

इ] पत्रिका :-

१] "समीक्षा" : मई - जून १९७७